रामचन्द्रिका में प्रकृति-चित्रण

मानव और प्रकृति का सम्बन्ध आदिकाल से ही है क्योंकि मानव ने प्रथम बार प्रकृति के मधुर प्रांगण में ही अपनी आँखें खोलीं, उसी की गोद में वह फला-फूला और बड़ा हुआ। उसने अपने और प्रकृति के सम्बन्धों में नाना भेदों की कल्पनाएँ कीं। काल-भेद से प्रकृति के सम्बन्ध में मानव की चिंतन-धाराओं में परिवर्तन भी होता गया और वह प्रकृति के साथ नवीनतर सम्बन्धों से आबद्ध होता गया, उसके भावलोक में प्रकृति के नये-नये रूप सामने आने लगे। मानव का यह भावलोक समय-समय पर काव्य भूमि पर भी विविध रूपों में अवतीर्ण होता गया। मानव और प्रकृति का सम्बन्ध सुश्री महादेवी वर्मा ने इन शब्दों में प्रकट किया है—

'दृश्य प्रकृति मानव-जीवन को अथ से इति तक चक्रवाल की तरह घेरे रही है। प्रकृति के विविध कोमल, पुरुष, सुन्दर विरूप व्यक्त रहस्यमय रूपों के आकर्षण-विकर्षण के मानव की बुद्धि और हृदय को परिष्कार और विस्तार दिया है, इसका लेखा-जोखा करने पर मनुष्य प्रकृति का सबसे अधिक ऋणी ठहरेगा। वस्तुतः संस्कार-क्रम में मानव-जाति का भाव जगत् ही नहीं, उसके चिन्तन की दिशाएँ भी प्रकृति से विविध रूपात्मक परिचय द्वारा तथा उससे उत्पन्न अनुभूतियों से प्रभावित हैं।'

यही कारण है कि प्रकृति और काव्य का अटूट सम्बन्ध है। आदिकवि वाल्मीकि के काव्य का प्रणयन प्रकृति की मधुर क्रोड में ही हुआ। इनके काव्य में प्रकृति का यथातथ्य चित्रण है। संस्कृत के अमर महाकवि कालिदास और भवभूति भी इसी परम्परा में आते हैं। इन दोनों ने भी प्रकृति का संश्लिष्ट चित्रण किया है। शनैः-शनैः मानव की आत्मा प्रकृति के जीवन में नये-नये सम्बन्ध खोजती गई और उनकी अभिव्यक्ति करती गई।

प्रकृति-चित्रण की विधाएँ

काव्य में प्रकृति-चित्रण की अनेक विधाएँ प्रचलित हैं जिनमें से प्रमुख विधाएँ ये हैं—

1. **आलम्बन या तथ्य रूप में**—इस रूप में प्रकृति कवि के लिए साधन न रहकर साध्य बन जाती है। कवि प्रकृति का निरीक्षण करके उसके मनोरम रूप में डूब जाता है। वह प्रकृति का परिगणना-प्रणाली में वर्णन न करके इसका संश्लिष्ट रूप में वर्णन करता है। उसका मन प्रकृति के आकर्षण में बँध जाता है और वह आत्मविभोर हो उठता है।

2. **पृष्ठभूमि के रूप में**—आलम्बन रूप और इस रूप में थोड़ा-सा अन्तर है। आलम्बन रूप का कोई विशिष्ट प्रयोजन नहीं होता, केवल प्रकृति का संश्लिष्ट चित्र

प्रस्तुत करना होता है, किन्तु पृष्ठभूमि के रूप में किया गया प्रकृति-चित्रण सप्रयोजन होता है। उसमें मानवीय भावों की छाया रहती है।

3. मानवीय भावनाओं के आरोप के रूप में—इस रूप में प्रकृति के उपादानों के वास्तविक रूपों में किसी प्रकार की विकृति नहीं लाई जाती, परन्तु महत्व उन्हीं उपादानों को दिया जाता है जो मानवीय भावों से साम्य रखते हैं।

4. उद्दीपन रूप में—इस रूप में प्रकृति मानवीय भावनाओं को उद्दीप्त करने का कार्य करती है। उद्दीपन रूप में प्रकृति-चित्रण दो रूपों में होता है। एक रूप वह है जहाँ संयोग अवस्था में प्रकृति प्रेमियों के आनन्द की भावनाओं को उद्दीप्त करने में सहायक होती है और दूसरा रूप वह है जहाँ वियोगावस्था में प्रकृति प्रेमियों के विरह-दुख को तीव्रतर बनाती है। संयोग में प्रकृति का वर्णन षड्ऋतु के अन्तर्गत किया जाता है और वियोग में बारहमासे के अन्तर्गत। इन विभेदों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण यही है कि सुख की घड़ियाँ देखते-देखते बीत जाती हैं और दुख का समय काटे नहीं कटता।

5. प्रतीकात्मक रूप में—प्रतीकात्मक रूप में कवि अपनी भावनाओं के आधार पर प्रकृति के उपादानों में से कुछ प्रतीक अपनी भावाभिव्यक्ति के लिए चुन लेता है जो उसकी अभिव्यक्ति को अधिक सशक्त और प्रभावपूर्ण बना देते हैं।

6. बिम्ब-प्रतिबिम्ब रूप में—इस रूप में प्रकृति और मानवीय भावनाओं का साम्य परिलक्षित होता है।

7. उपदेशात्मक रूप में—इस रूप में प्रकृति के माध्यम से उपदेशों की संयोजना की जाती है।

8. अलंकारिक रूप में—इस रूप में प्रकृति के उपादानों को सौन्दर्य के उपमान मानकर मानव-सौन्दर्य की अभिव्यक्ति की जाती है।

9. दूत के रूप में—इस रूप में प्रकृति से सन्देशवाहक का कार्य लिया जाता है।

10. रहस्यात्मक रूप में—रहस्यवादी कवि प्रकृति में परम तत्त्व के दर्शन करता है और इस प्रकार प्रकृति सौन्दर्य और सुषमा की निधि न रहकर रहस्य के गूढ़ तत्वों का अमित भंडार बन जाती है।

11. मानवीकरण—इस रूप में प्रकृति अचेतन न रहकर मानवात्मा की भाँति संचेतन और सजीव बन जाती है।

12. परिगणन प्रणाली के रूप में—इस रूप में कवि प्रकृति के उपादानों का केवल नाम गिनाता चलता है। इस प्रणाली में भावों का अभाव रहता है।

रामचंद्रिका में प्रकृति-चित्रण

यद्यपि केशव का प्रकृति-विषयक दृष्टिकोण व्यापक था और इसमें प्रकृति के प्रति परम्परागत आकर्षण था, तथापि रामचन्द्रिका में प्रकृति-चित्रण मुख्यतया चार रूपों में प्राप्त होता है—

1. अलंकारिक रूप में
2. उद्दीपन रूप में
3. परिगणना शैली के रूप में
4. बिम्ब-प्रतिबिम्ब रूप में

1. अलंकारिक रूप में—केशव अलंकारवादी आचार्य थे, अतः इनके चित्रण में प्रकृति का अलंकारिक रूप ही अपेक्षाकृत अधिक विस्तार से मिलता है। इस रूप में केशव ने किसी प्रकार की मौलिकता प्रदर्शित करने का प्रयास नहीं किया, वरन् परम्परा का ही निर्वाह किया है। अवधपुरी में उडती हुई पताकाओं का वर्णन करता हुआ कवि कहता है—

'बहु बायु वस बारिद बहोरहि अरुझि दामिनि दुति मनो।'

इस वर्णन में केवल उत्प्रेक्षा अलंकार का चमत्कार है। मानवीय सौंदर्य का वर्णन करने के लिए भी केशव ने प्रकृति का प्रयोग किया है। सीता के मुख की उपमा कमल से देते हुए कवि कहता है—

'सुन्दर सुवास अरु कोमल अनल अति,
सीता जू को मुख सखि केवल कमल सो।'

राम के मुख की शोभा का वर्णन करने के लिए भी कवि ने प्रकृति के उपादानों को ही चुना है—

'अति बदन सोभ सरसी सुरंग। तहँ कमल नैन नासा तरंग॥
जनु जुवति चित्त बिभ्रम बिलास। तेह भ्रमर भंवत रसरूप आस॥'

सन्देह और श्लेष अलंकार के बल पर कवि ने वर्षा को तो कालिका का ही रूप दे दिया है—

भौंहें सुरचाप चारु प्रमुदित्त पयोधर,
भूखन जराय जोति तड़ित्त रलाई है।
दूरि करी सुख मुख सुखमा ससी की,
नैन अमल कमलदल दलित निकाई है।
केसोदास प्रबल करेनुका गमन हर,
मुकुत सुहंसक सबद सुखदाई है।
अम्बर बलित मति मोहै नीलकंठ जू की,
कालिका कि वरषा हरषि हिय आई है।'

इस वर्णन में अलंकार का मोह प्रकृति-वर्णन के सिर पर चढ़कर बोल रहा है।

2. उद्दीपन रूप—रामचन्द्रिका में प्रकृति के उद्दीपन रूप का राम और सीता के वियोग के प्रसंग में चित्रण हुआ है। सीता के अपहरण होते ही वर्षा ऋतु का वर्णन है। परम्परा से वर्षा वियोगी के वियोग-दुख को बढ़ाने वाली मानी गई है। सीता के वियोग

में राम इतने दुखी हो जाते हैं कि उनका जीवन भी दूभर हो जाता है। वे लक्ष्मण से कहते हैं कि हे लक्ष्मण! सीता के वियोग में कलहंस, चन्द्रमा, खंजन और कमलों को देखकर मैं अब तक इसलिए जीवित था कि मैंने इन्हें सीता की गति, मुख, नेत्र और पैरों के समान मान लिया था, किन्तु कराल काल से मेरा यह सन्तोष भी न देखा गया। उसने वर्षा के बहाने से इन वस्तुओं को भी खोज-खोज कर दूर कर दिया। अब प्रिया के बिना मेरे प्राण किसका अवलम्बन लेकर जीवित रहेंगे–

'कलहंस कलानिधि खंजन कंज कछु दिन केसव देखि जिये।
गति आनन लोचन पायन के अनुरूपक से मन मानि लिये।
यह काल कराल ते सोधि सबै हठि कै बरषा मिस दूरि किये।
अबधौं बिनु प्रानप्रिया रहिहैं कहि कौन हितू अवलम्बि हिये॥'

वर्षा ऋतु के पश्चात शरद ऋतु आती है। शरदृऋतु को उद्दीपन रूप में चित्रित करने के स्थान पर कवि अलकारों के इतने अधिक मोह में पड़ गया कि रूपक, उपमा, उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों में ही उलझा रहा और राम पर शरद-ऋतु का क्या प्रभाव पड़ा, इसकी ओर उसने ध्यान नहीं दिया।

प्रकृति के उद्दीपन रूप के चित्रण का रामचन्द्रिका में जितना अवसर है, उस अवसर का कवि ने यथोचित लाभ नहीं उठाया। उसके समक्ष भाव गौण और अलंकार प्रधान रहे। फलतः प्रकृति का उद्दीपन रूप एक प्रकार की खिलवाड़ बनकर रह गया।

3. परिगणन शैली के रूप में–परिगणन शैली के रूप में रामचन्द्रिका में प्रकृति का चित्र अपेक्षाकृत अधिक हुआ है। इस आधिक्य का कारण है केशव का आचार्यत्व। दशरथ के बाण, सरोवर आदि का वर्णन, विश्वामित्र ने यज्ञ-स्थल और राम की वाटिका के वर्णन इसी शैली के अन्तर्गत आते हैं। इन वर्णनों में भावात्मकता नाममात्र को भी नहीं है। यथा–

'सुभ सर सोभै। मुनि मन लोभैं॥
सरसिज फूलि। अलि रस भूले।
जलचर डोलैं। बहु खग बोलैं॥'

इस प्रकृति-वर्णन में केवल काव्यशास्त्रीय परम्परा का निर्वाह है, क्योंकि काव्यशास्त्र के अनुसार किसी सर का वर्णन करते समय कमल, भ्रमर, जलचर और उसके किनारे पर बैठे हुए पक्षियों का वर्णन करना आवश्यक है। इसी प्रकार–

'तरू तालीस तमाल ताल हिंताल मनोहर।
मंजुल बंजुल लकुच बकुल कुल केर नारियर॥
एला ललित लवंग संग पुंगीफल सोहै।
सारी सुक कुल कलित चित्त कोकिल अलि मोहै॥
सुभ राजहंस कलहंस कुल नाचत मत्त मयूर गन।
अति प्रफुलित फलित सदा है रहै केसवदास विचित्र बन॥'

इस वर्णन में वन की विचित्रता दिखलाने के लिए कवि उसमें उन चीजों का भी वर्णन कर गया है जो वहाँ नहीं होती; अर्थात् जिस प्रदेश के वन का यह वर्णन है वहाँ एला, लवंग और पुंगीफल नहीं होते।

4. बिम्ब-प्रतिबिम्ब रूप में—रामचन्द्रिका में ऐसे भी प्रकृति-वर्णन मिलते हैं जहाँ कवि ने बिम्ब ग्रहण कराने की चेष्टा की है। इस प्रकार के वर्णनों में वर्षाऋतु का वर्णन उल्लेखनीय है। यथा—

'चहूँ दिया बादल दल नचै। उज्जल कज्जल की रुचि रचैं॥
दिसि दिसि दमकति दामिनी बनी। डक चौंधति लोचन रुचि घनी॥
गाजत बाजत घनौ मृदंग। चातक पिक गायक बहुरंग॥'

समग्र रूप से रामचन्द्रिका में चित्रित प्रकृति को देखकर यह निष्कर्ष निकालना कठिन नहीं कि केशव का प्रकृति-चित्रण भावात्मकता का द्योतक नहीं, वरन् उनके पांडित्य का सूचक है। अलंकारों के प्रति उनका इतना अदम्य मोह है कि चाहे भाव निष्प्राण हो जाये अथवा हास्यास्पद बन जाये, किन्तु अलंकार की छटा वहाँ अवश्य विद्यमान हो। इसी कारण बाल-रवि काल-रूपी कापालिक के हाथ का खून से भरा हुआ सिर बन जाता है—

'कै स्रोनित कलित कपाल यह किल कापालिक को।'

और दण्डक-वन की शोभा प्रलयकाल बन जाती है—

'बेर भयानक सी अति लगै। अर्क समूह जहाँ जगमगै॥
नैनन को बहु रूपन ग्रसै। श्री हरि की जनु मूरत लसै॥'

ऐसे वर्णन कवि की भावुकता के लिए कलंक हैं। इसीलिए रामचन्द्रिका के प्रकृति-चित्रण से क्षुब्ध होकर डॉ. बड़थ्वाल ने लिखा है—

'प्रकृति के सौन्दर्य से उनका (केशव का) हृदय द्रवीभूत नहीं होता। वह प्रकृति में मनुष्य के सुख-दुःख के लिए सहानुभूति नहीं पाते, उसमें जीवन का स्पन्दन नहीं पाते, परमात्मा का अन्तर्हित स्वस्व नहीं देखते। फूल उनके लिए निद्देश्य फूलते हैं, नदियाँ बेमतलब बहती हैं, वायु निरर्थक चलती है। प्रकृति में वह कोई सौन्दर्य नहीं देखते। बेर उन्हें भयानक लगती है, वर्षा काली का रूप सामने लाती है और बाल-रवि कापालिक के खप्पर भरे श्रोणित का रूप उपस्थित करता है। सीता के वीणा-वादन से मुग्ध हो फिर आये मयूर की शिखा, सुए की नाक, केकी का कण्ठ, हरिणी की आँखें, मराल की मन्दगति, इसलिए राम से इनाम नहीं पाते कि यह वस्तु वास्तव में सुन्दर हैं, वरन् इसलिए कि कवि इन्हें परम्परा से सुन्दर मानते चले आये हैं।'